मानसून की चुनौतियों से कैसे निपटेंगे हम

तब गांव हो या शहर, हर कहीं बड़े-बड़े तालाब और गहरे-गहरे कुएं होते थे और पानी अपने आप धीरे-धीरे इनमें समा जाता था, जिससे भूजल स्तर भी बढ़ता था लेकिन अब विकास की अंधी दौड़ में तालाबों की जगह ऊंची-ऊंची इमारतों ने ले ली है, शहर कंक्रीट के जंगल बन गए हैं, अधिकांश जगहों पर कुओं को मिट्टी डालकर भर दिया गया है।

बदइंतजामी और साथ ही प्रकृति के बदले मिजाज के चलते अब हर साल देशभर में प्रचण्ड गर्मी के बाद बारिश रूपी राहत को आफत में बदलते देर नहीं लगती और तब मानसून को लेकर हमारा सारा उत्साह काफूर हो जाता है। पिछले कुछ वर्षों से हम लगातार यही देखते आ रहे हैं कि मानसून दोनों ही रूपों में कहर बरपा रहा है, कहीं बहुत कम बरसकर सूखे के हालात पैदा कर और कहीं जरूरत से ज्यादा बरसकर बाढ़ की विभीषिका उत्पन्न कर। दरअसल हमारी फितरत कुछ ऐसी हो गई है कि हम मानसून का भरपूर आनंद तो लेना चाहते हैं किन्तु इस मौसम में किसी भी छोटी-बड़ी आपदा के उत्पन्न होने की प्रबल आशंकाओं के बावजूद उससे निपटने की पूरी तैयारियां नहीं कर पाते। यह ऐसा खुशनुमा मौसम है, जब प्रकृति हमें भरपूर पानी देती है किन्तु पानी की कमी से बूरी तरह जूझते रहने के बावजूद हम इस पानी को सहेजने के कोई कारगर इंतजाम नहीं करते और यह पानी व्यर्थ ही बहकर समुद्रों में समा जाता है। हालांकि ष्वाटर हार्वेस्टिंगष् (वर्षा जल को विशेष तरीके से संचित करने की प्रणालीद्ध का शोर तो बहुत सुनते रहे हैं लेकिन ऐसी योजनाएं अभी तक सिरे नहीं चढ़ी हैं।

हमारी नाकारा व्यवस्थाओं के चलते चंद घंटों की बारिश में ही दिल्ली, मुम्बई, हैदराबाद, बेंगलुरू जैसे बड़े-बड़े शहरों में भी प्रायः जलप्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। हल्की सी बारिश क्या हुई, सड़कों पर पानी भर जाता है, गाड़ियां रेंग-रेंगकर चलने लगती हैं, रेल तथा विमान सेवाएं प्रभावित होती हैं, सड़कें धंस जाती हैं, जगह-जगह जलभराव होने से पैदल चलने वालों का बुरा हाल हो जाता है। यह कोई एक साल की बात नहीं है बल्कि हर साल यही नजारा सामने आता है लेकिन स्थानीय प्रशासन द्वारा ऐसे पुख्ता इंतजाम कभी नहीं किए जाते, जिससे लोग बारिश का भरपूर आनंद उठा सकें और बारिश के पानी का संचयन किया जा सके। देश की आजादी के बाद दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्र ही बाढ़ की विभीषिका झेलने के लिए जाने जाते थे किन्तु विकास के कई सोपान तय करने के बावजूद देश में हालात इतने बदतर हो चुके हैं कि हर साल हमारे विकसित शहर भी अब बाढ़ जैसी आपदा से त्रस्त हो रहे हैं और हम ऐसी आपदाओं से निपटने के लिए कुछ नहीं कर पा रहे हैं। कहना गलत न होगा कि अमेरिका, जापान, चीन सरीखे देशों की तुलना में आपदा प्रबंधन के मामले में हम कोसों पीछे हैं।

माना कि प्रकृति के समक्ष हम बेबस हैं किन्तु सदैव यही देखा जाता है कि हर प्राकृतिक आपदा के समक्ष उससे बचाव की हमारी समस्त व्यवस्था ताश के पत्तों की भांति ढह जाती है। ऐसी आपदाओं से बचाव तो दूर की कौड़ी है, हम तो मानसून में सामान्य वर्षा होने पर भी बारिश के पानी की निकासी के मामले में साल दर साल फेल होते रहे हैं। हमारी व्यवस्था का काला सच यही है कि देशभर के लगभग तमाम राज्यों में प्रशासन के पास पर्याप्त बजट के बावजूद प्रतिवर्ष छोटे-बड़े नालों की सफाई का काम मानसून से पहले अधूरा रह जाता है, जिसके चलते ऐसे हालात उत्पन्न होते हैं। कई जगहों पर देखा जाता है कि मानसून से पहले नालों की सफाई के दौरान सैंकड़ों मीट्रिक टन सिल्ट निकालकर उसे नाले के करीब ही छोड़ दिया जाता है, जो तेज बारिश के दौरान दोबारा बहकर नाले में चली जाती है और थोड़ी

> **7 अगस्त की शाम दिल्ली में हुई कुछ देर की मूसलाधार बारिश में ही दिल्ली और आसपास के इलाकों में हालात पूरी तरह अस्त-व्यस्त हो गए। कुछ दिनों पूर्व भी लगातार तीन-चार दिन की ही बारिश के चलते देश के कई शहरों में बहुत बदतर हालात देखे गए थे, जगह-जगह सड़कें धंस गई थी, कारों की छतों पर पानी भर गया था, कई जगहों पर मकान ढ़ह गए थे, यमुना खतरे के निशान से ऊपर पहुंच गई थी, बारिश के चलते दर्जनों लोगों की मौत हो गई थी। इन हालातों ने हर साल की भांति एक बार फिर बाढ़, जल निकासी और ऐसे हालातों से निपटने के सारी तैयारियां कर लेने के दावों की कलई खोलकर रख दी। एक समय था, जब मानसून अथवा वर्षा ऋतु के दौरान लोगों का उत्साह देखते ही बनता था किन्तु अब तो हर एक गुजरे जमाने की ही बात लगती है, जब मानसून की बारिश लगातार कई-कई दिनों तक रूकने का नाम नहीं लेती थी और खेत-खलिहान, सड़कें हर कहीं पानी ही पानी नजर आता था लेकिन तब भी हम उस मौसम का भरपूर आनंद उठाते थे।**

सी बारिश में ही ये नाले उफनते लगते हैं। कागजों में नालों की साफसफाई का कार्य पूरा हुआ दर्शा दिया जाता है जबकि वास्तविकता यही है कि हर साल प्रशासन के खोखले दावों और आधी-अधूरी तैयारियों के चलते जनता को ढ़ेरों परेशानियों से दो-चार होना पड़ता है। देश में कृषि क्षेत्र लंबे समय से गंभीर संकट के दौर से गुजर रहा है और मानसून किसानों के लिए किसी वरदान से कम नहीं होता। बारिश उनके चेहरे पर खुशियां लाती है क्योंकि किसानों की यही आस होती है कि बारिश से उनके खेतों की पर्याप्त सिंचाई होगी और उनके खेत फसलों के रूप में सोना उगलेंगे लेकिन कई बार तमाम भविष्यवाणियों के बावजूद मानसून दगा दे जाता है और किसानों सहित हर कोई आसमान की ओर टकटकी लगाए बारिश का इंतजार करता रह जाता है। यह सब ग्लोबल वार्मिंग का दुष्प्रभाव ही है। खेतों के लिए पानी की आवश्यकता की बात हो या हमारी रोजमर्रा की जरूरतों के लिए, पानी की कमी देश में एक बड़े संकट के रूप में उभरकर सामने आने लगी है।

पानी को लेकर देश के विभिन्न हिस्सों से अब आपस में लड़ाई-झगड़े की खबरें भी आने लगी हैं किन्तु फिर भी विडम्बना ही है कि हम पानी को सहेजने के लिए अपने-अपने स्तर पर प्रयास नहीं करना चाहते। खासकर बारिश के पानी को हम व्यर्थ बह जाने देते हैं, हम उसका इस प्रकार संग्रहण नहीं कर पाते ताकि वर्षभर हमें पानी की कोई कमी महसूस न हो। आंकड़ों पर नजर डालें तो देश में 1950 के दशक में प्रति व्यक्ति 5220 घन मीटर पानी उपलब्ध था किन्तु जल संकट की अनदेखी और औद्योगिकीकरण की अंधी दौड़ के चलते आज यह मात्र 1588 घन मीटर रह गया है और 2025 तक यह 1100 घन मीटर प्रति व्यक्ति रहने का अनुमान है। जल प्रबंधन के मामले में हम कितने पिछड़े हैं, इसका सहज अनुमान इसी से लगा सकते हैं कि देश में प्रतिवर्ष 1869 नदियों, बर्फ पिघलने तथा वर्षा के जल से करीब चार हजार घन किलोमीटर जल एकत्रित होता है किन्तु उसमें से हम सिर्फ 1123 घन किलोमीटर का ही उपयोग कर पाते हैं। शेष पानी जल प्रबंधन के अभाव में नालों व नदियों के रास्ते बहकर समुद्र में मिल जाता है। भारत में पानी की कमी की समस्या कितनी विकराल हो चुकी है, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि भारत में जहां दुनिया की करीब 17 फीसदी आबादी रहती है, वहां दुनिया में उपलब्ध जल का महज चार फीसदी हिस्सा ही मौजूद है। हम अपनी स्कूली किताबों में भी पढ़ते रहे हैं कि पृथ्वी के तीन चौथाई हिस्से पर पानी भरा है किन्तु इसमें से 97 फीसदी पानी समुद्रों में है और सिर्फतीन फीसदी ही पीने लायक है और उसमें से भी दो फीसदी ग्लेशियरों के रूप में उपलब्ध है। आंकड़ों के अनुसार दुनियाभर में करीब 1ण्1 अरब लोग जल संकट से जूझ रहे हैं।

अगर हमें पानी की विकराल होती समस्या से बचना है तो इसके लिए सबसे बड़ा उपाय यही है कि धरती रूपी गुब्बक में बारिश का पानी जमा करने के उपाय किए जाएं लेकिन इस कार्य में भी सबसे बड़े बाधक हम स्वयं ही बन रहे हैं। तेज बारिश आने पर हम अपने घरों का कूड़ा-कचरा पॉलीथिन की थैलियों में बांधकर नालियों में बहा देते हैं, जिससे प्रायः नालियां चोक हो जाती हैं और शहर हो या गांव, बारिश का थोड़ा सा पानी इकट्ठा होने पर भी उफनने लगती हैं, जिससे थोड़ी बारिश में भी जलभराव की स्थिति बन जाती है। यही हाल हमने नदियों का भी कर डाला है, औद्योगिकीकरण और जनसंख्या विस्फोट के चलते तालाबों को हमने रिहायशी स्थानों में परिवर्तित कर दिया है और नदियों में इतना कचरा भर दिया है कि वे भी थोड़े से अतिरिक्त पानी से उफनने लगती हैं तथा तेज बारिश होने पर हालात बाढ़ जैसे बन जाते हैं। नदियों में गंदगी व कचरा भरा होने के कारण बारिश का अतिरिक्त पानी इनके रास्ते समुद्रों में समा जाता है और धरती प्यासी ही रह जाती है। हमें भली-भांति यह समझ लेना होगा कि भूजल का गिरता स्तर ही देश में पेयजल संकट के बढ़ने का प्रमुख कारण है। जिस प्रकार बच्चे अपनी गुल्लक में अभिभावकों से मिले थोड़े-थोड़े पैसों को एकत्रित करते हैं और जरूरत पड़ने पर बचत के उन पैसों का उपयोग किया जाता है, ठीक उसी प्रकार धरती रूपी गुब्बक में पानी एकत्रित करने की आवश्यकता है, जिसका उपयोग जरूरत पड़ने पर आसानी से किया जा सकता है किन्तु इसके लिए पहले की भांति जगह-जगह बड़े-बड़े तालाबों का निर्माण करना होगा, नदियों को साफसुथरा बनाने के लिए बड़े स्तर पर जागरूकता अभियान चलाना होगा और जलस्रोतों को प्रदूषित करने वालों के खिलाफ कड़ी सजा का प्रावधान करना होगा। अगर तालाबों, पोखरों या नदियों में गाद या कचरा जमा नहीं होगा तो बारिश का पानी इनके जरिये धीरे-धीरे रिसकर धरती के नीचे भूजल भंडार में जा मिलेगा है, जिससे भूजल स्तर बढ़ेगा।

योगेश कुमार गोयल
(दे लेखक के अपने विचार है)

यादो में सिमट कर रह गये सावन के झूले

सावन का महीना पवन करे शोर कभी ये गाना सावन आते ही लोगों की जुबान पर खुद.ब.खुद आ जाता था। आज वक्त ने ऐसी करवट ली है कि सावन तो आता है पर अपने रंग नहीं बिखेर पाता। जिस सावन के आते ही नववधु ससुराल से मायके पहुंच जाती थी। मां बेटी के घर आने का इंतजार गली.मुहल्ले की औरतों के साथ करती थीं। अब वैसा सावन नही होता है। जब सावन का महिना आता है तो अपनी रिमझिम फुहारों से तन.मन को शीतलता प्रदान तो करता ही है साथ ही नीले आसमान पर बहती काली.काली घटाएं प्रत्येक जीव में प्रसन्नता का संचार कर देती हैं। सारा वातावरण मदमस्त सा हो उठता है।

पहले सावन का महीना आते ही गांव के मोहल्लों में झूले पड़ जाते थे और सावन की मल्हारें गूंजने लगती थी। ग्रामीण युवतियां महिलाएं एक जगह देर रात तक श्रावणी गीत गाकर झूला झूलने का आनंद लेती थी। वहीं जिन नव विवाहिता वधुओं के पति दूरस्थ स्थानों पर थे उनकों इंगित करते हुए विरह गीत सुनना अपने आप में लोक कला का ज्वलंत उदाहरण हुआ करते थे। झूले की पैंगों पर बुंदियों भी जोशीले अंदाज में गायन शैली मात्र यादों में सिमट कर रह गई है। सामाजिक समरसता की मिसाल, जाति पाति के बंधन से मुक्त अल्हड़पन लिए बालाएं उनकी सुरीली किलकारियां भारतीय सभ्यता को अपने में समेटे हुए सांकेतिक लोकगीत जैसे किसी दिली आकांक्षा की कहानी कर्यो करते थे उसका अंदाज ही निराला था। समय के साथ पेड़ गायब होते गए और बहुमंजिला इमारतों के बनने से आंगन का अस्तित्व लगभग समाप्त हो गया। ऐसे में सावन के झूले भी इतिहास बनकर हमारी परम्परा से गायब हो रहे हैं। अब सावन माह में झूले कुछ जगहों पर ही दिखाई देते हैं। जन्माष्टमी पर मंदिरों में सावन की एकादशी के दिन भगवान को झूला झूलाने की परम्परा जरूर अभी भी निभाई जा रही है।

वर्षा ऋतु की खूबियां अब किताबों तक ही सीमित रह गयी है। वर्षा ऋतु में सावन की महिमा धार्मिक अनुष्ठान की दृष्टि से तो बढ़ ही जाती है। प्रकृति के संग जीने की परम्परा थमती जा रही है। झूला झूलने का भी दौर भी अब समाप्त हो गया है। आधुनिकता की दौड़ में प्रकृति के संग झूला झूलने की बात अब कहीं नहीं दिखती है। ग्रामीण क्षेत्र की युवतियां भी सावन के झूलों का आनंद नहीं उठा पाती है। आज से दो दशक पहले तक झूलों और मेंहदी के बिना सावन की परिकल्पना भी नही होती थी। आज के समय में सावन के झूले नजर ही नहीं आते हैं। लोग इसका कारण जनसंख्या घनत्व में वृद्धि के साथ ही वृक्षों की कटाई मानते हैं। लोग अब घर की छत पर या आंगन में ही रेडीमेड प्रेम वाले झूले पर झूलकर मन को संतुष्ट कर रहे हैं। बुद्धिजीवी वर्ग सावन के झूलों के लुप्त होने की प्रमुख वजह सुख सुविधा और मनोरंजन के साधनों में वृद्धि को मान रहे हैं।

सावन में प्रकृति श्रृंगार करती है जो मन को मोहने वाला होता है। यह मौसम ऐसा होता है जब प्रकृति खुश होती है तो लोगों का मन भी झूमने लगता है। झूला इसमें सहायक बन जाता है। भारतीय संस्कृति में झूला झूलने की परम्परा वैदिक काल से ही चली आ रही है। भगवान श्रीकृष्ण राधा संग झूला झूलते और गोपियां संग रास रचाते थे। मान्यता है कि इससे प्रेम बढ़ने के अलावा प्रकृति के निकट जाने एवं उसकी हरियाली बनाये रखने की प्रेरणा मिलती है। संस्कृति एवं परम्परा की ही देन है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों के गांव और कस्बों में लोग झूला झूलते हैं। विशेष कर महिलाएं और युवतियां इसकी शौकीन होती हैं। भारतीय हिंदी महीने की हर माह की अपनी खुशबू है। सावन व भादो का महीना प्रकृति के और निकट ले जाता है। झूले झूलने के दौरान गाये जाने वाले गीत मन को सुकून देते हैं।

झूला गांव के बागीचों, मंदिर के परिसरों में लगाया जाता है। जिस पर अधिकतर युवतियों का ही कब्जा होता है। गांव के युवक इसमें शामिल अवश्य होते हैं लेकिन केवल सहयोगी के रूप में। उन्हें दूर से ही इसे देखने की इजाजत मिलती है। वर्तमान समय में अब झूले की परम्परा लुप्त हो रही है। सावन भादों की खुशबू अब नहीं दिखती है। एक दो स्थानों को छोड़ कर लोग इसका आनंद नहीं ले पा रहे हैं। इन झूलों के नहीं होने से लोकसंगीत भी सुनने को नहीं मिलता है।

सावन के आते ही गली.कूचों और बगीचों में मोर, पपीहा और कोयल की मधुर बोली के बीच युवतियां झूले का लुत्फ उठाया करती थीं। अब न तो पहले जैसे बगीचे रहे और न ही मोर की आवाज सुनाई देती है। यानी बिन झूला झूले ही सावन गुजर जाता है। लगातार पड़ रहे प्राकृतिक आपदाओं के कहर का असर माना जाए या वन माफियाओं की टेढ़ी नजर का परिणाम कि गांवों में भी बगीचे नहीं बचे, जहां युवतियां झूला डाल कर झूल सके व मोर विचरण कर सके।

गांव की बुजुर्ग महिलायें बताती हैं कि सावन के नजदीक आते ही बहन.बेटियां ससुराल से मायके बुला ली जाती थीं और पेड़ों पर झूला डाल कर झूलती थीं। झुंड के रूप में इकट्ठा होकर महिलाएं सावनी गीत गाया करती थीं। बुजुर्ग महिलायें बताती हैं कि त्योहार में बेटियों को ससुराल से बुलाने की परम्परा आज भी चली आ रही है, लेकिन जगह के अभाव में न तो कोई झूला झूल पाता है और न ही अब मोर, पपीहा व कोयल की सुरीली आवाज ही सुनने को मिलती हैं। बुजुर्ग महिलाओं की मानें तो दस साल पहले तक यहां रक्षाबंधन तक झूले का आनंद लिया जाता रहा है। गांव के पेड़ पर मोटी रस्सी से झूला डाला जाता था और सारे गांव की बहन.बेटियां झूलती थीं। अब पेड़ ही नहीं हैं तो झूला कहां डालें।

सावन के महीने में नवविवाहित महिलाओं को अपने मायके जाने की परम्परा राजस्थान की संस्कृति में अधिक परिलक्षित होती है, जो आज भी अनवरत रूप से चली आ रही है। इसलिए सावन के महीने में राजस्थान के घर.घर और गली.मोहल्लों में झूले पर झूलती हुई अविवाहित कुमारियां अपने माता.पिता और सगे.संबंधियों से यह आग्रह करती हैं कि उनका विवाह कहीं पास के गाँव में ही किया जाय, ताकि सावन के महीने में उसे अपने घर बुला पाएं।

झूला झूलने के खत्म हुए रिवाज के लिए गांवों में फैल रही वैमनष्यता जिम्मेदार हैं। पहले गांव के लोग हर बहन.बेटी को अपनी मानते थे लेकिन अब जमाना बदल गया है। जिसके हाथ में रक्षा सूत्र बांधा जाता है, वही भक्षक बन जाता है। कूल मिला कर बाग.बगीचों के खात्मे के साथ जहां मोर.पपीहों की संख्या घटी है, वहीं समाज में बढ़ रही गैर समझदारी के कारण भाईचारे में बेहद कमी आई है। नतीजतन, झूला झूलने की परम्परा को ग्रहण लग गया है।

सावन में झूला झूलना मात्र आनंद की अनुभूति नहीं कराता अपितु यह स्वास्थ्यवर्धक प्राचीन योग है जो सावन के मनोरम मौसम के कारण प्रदूषण मुक्त कई शुध्द वायु देता है और स्वास्थ्य प्रदायक है। सावन महीने की विशेषता है कि इस माह हवा अन्य महीनों की तुलना में अधिक शुध्द होती है। सावन में चहुंदिशा हरियाली छाई होती है। हरा रंग आंखों पर अनुकूल प्रभाव डालता है। इससे नेत्र ज्योति बढ़ती है। झूला झूलते समय श्वांस उच्छ्वास लेने की गति में तीव्रता आती है। इससे फेफड़े सुदृढ़ होते हैं। इसके साथ ही झूलते समय श्वांस अधिक भरा, रोका एवं वेग से छोड़ा जाता है। इससे नवीन प्रकार का प्राणायाम पूर्ण हो जाता है जो स्वास्थ्य सहयोगी है। झूलते समय श्वांस-प्रश्वांस लेने की गति में तीव्रता आती है। इससे फेफड़े सुदृढ़ होते हैं। इसके साथ ही झूलते समय श्वांस अधिक भरा, रोका एवं वेग से छोड़ा जाता है। इससे नवीन प्रकार का प्राणायाम पूर्ण हो जाता है जो स्वास्थ्य सहयोगी है। झूलते समय श्वांस-प्रश्वांस लेने की गति में तीव्रता आती है। इससे फेफड़े सुदृढ़ होते हैं। इसी प्रकार खड़े होकर झूलते समय झूले को गति देने बार.बार उठक.बैठक लगानी पड़ती हैं। इन क्रियाओं से एक ओर हाथ, हथेलियों और उंगलियों की शक्ति बढ़ती है वहीं दूसरी ओर हाथ.पैर और पीठ.रीढ़ का व्यायाम हो जाता है। यह अच्छे स्वास्थ्य का कारक है।

शहरों में जगह की कमी ने परम्परा के निर्वाह में बाधा खड़ी कर दी है। अब झूले लगाने के लिए जगह की तलाश करनी पड़ती है। पहले संयुक्त परिवार में बड़े-बूढ़ों के सानिध्य में लोग एक दूसरे के घरों में एकत्रित होते थे। जबकि एकल परिवार ने इस आपसी स्नेह को खत्म कर दिया है। महिलाएं सामुदायिक केन्द्रों में तीज पर्व मनाती हैं। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से सभी एक दूसरे के साथ खुशियां बांटती हैं। सावन के झूले कहां हैं, अब तो लोग महंगाई के झूले झूल रहे हैं। भौतिकवाद ने एक-दूसरे के प्रति लगाव भी खत्म कर दिया है। लॉन में लोहे व बांस के झूले लगा लि, और हो गया परम्परा का निर्वाह। अब तो पहनावा भी आधुनिकीकरण की भेंट चढ़ गया है। अब तो लोग तीज के दिन मॉल में जाते हैं, फिल्म देखते हैं, खाना खाते हैं और मना लेते हैं सावन के पूरे त्योहार।

रमेश सर्राफ धमोरा
(दे लेखक के अपने विचार है)

अमृत वाणी

प्रकृति अपरिमित ज्ञान का भंडार है, परंतु उससे लाभ उठाने के लिए अनुभव आवश्यक है।

-हरिऔध,

ये हुई न बात !

पटना हाई कोर्ट ने बोर्ड परीक्षा में एक छात्र को गलत तरीके से अनुत्तीर्ण घोषित करने पर बिहार स्कूल एग्जामिनेशन बोर्ड पर एक लाख रूपये का जुर्माना लगाया है। बोर्ड ने अपनी सफाई में बताया था कि लिपिकीय त्रुटिवश विद्यार्थी को कम नंबर दर्शाए गए थे लेकिन अदालत ने उसे कोई महत्व नहीं दिया।

निस्संदेह अदालत का यह एक अति उत्तम और सार्थक फैसला कहा जाना चाहिए। प्रति वर्ष जगह-जगह परीक्षा बोर्डों द्वारा ऐसी लापरवाहियां एक आम बात हो गई है। परीक्षा के नाम से बोर्ड बच्चों से अच्छी खासी रकम तो वसूलते है लेकिन उनकी उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन के मामले में समुचित सावधानी और सतर्कता नहीं बरती जाती जिसके कारण बच्चों के परिणामों में कई प्रकार की चूक रह जाती है। सर्वाधिक आघात उन बच्चों और उनके अभिभावकों को लगता है जिन्हें अपने मेहनत के अनुकूल अच्छे परिणामों की अपेक्षा रहती है लेकिन परिणाम आशानुकूल नहीं होते और जिन बच्चों को गलत तरीके से अनुत्तीर्ण घोषित कर दिया जाता है उन पर क्या गुजरती है यह तो वे ही जानते हैं। पुनर्मूल्यांकन और पेपर खुलवाने के भी बोर्ड अच्छी खासी फीस निर्धारित कर रखता है जिसे वहन करना सारे विद्यार्थियों के वश की बात नहीं होती जिससे अधिकतर लोग जबरन हालात के साथ समझौता करके रह जाते है और जिनके परिणामों में मुनर्मूल्यांकन से सुधार हो भी जाता है वह भले ही नतीजे की दृष्टि से सही हो पर उस विद्यार्थी को वह खुशी कदापि नहीं दिला सकता जो उसे पहली घोषणा में अच्छे परिणाम से मिल सकता था।

कई बार बोर्ड की ऐसी लापरवाही के आघात को विद्यार्थी सहन भी नहीं कर पाते और आत्मग्लानिवश आत्मघाती कदम तक उठा लेते है जिससे उनका पूरा परिवार टूट जाता है।

अहम बात रहे कि ऐसी लापरवाहियां कदापि सहन करने लायक नहीं है। बोर्ड परीक्षा कोई मजाक नहीं है। परीक्षा के लिए विद्यार्थी जी जान से मेहनत करता है। उसका और उसके परिवार का परीक्षा के नतीजा को लेकर कई सपने होते हैं। यही नहीं ये नतीजे उसके करियर और भविष्य से जुड़े होते है अतः उसमें किसी भी प्रकार की लापरवाही या चूक की तो गुंजाइश ही नहीं हो सकती। फिर भी अगर बोर्ड ऐसी कोई भूल करता है तो उसकी कीमत भी उसे उसी अनुसार चुकानी ही चाहिए। इस परिपेक्ष्य में पटना हाई कोर्ट के इस फैसले से सभी परीक्षा बोर्डों को एक सबक अवश्य लेनी चाहिए।

राज काज

शाह क्यों मांगें माफी

भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने कोलकाता में ममता बनर्जी और उनकी पार्टी टीएमसी के खिलाफ हुंकार भरते हुए उन्हें उखाड़ फेंकने की बात कही। एक रैली को संबोधित करते हुए शाह ने आरोप लगाया कि ममता एनआरसी का इसलिए विरोध कर रही हैं, क्योंकि घुसपैठि, तृणमूल कांग्रेस का वोट बैंक हैं। शाह की यह बात तृणमूल कांग्रेस को बहुत बुरी लगी और उन्होंने शाह को 72 घंटे का अल्टीमेटम देते हुए उन्हें माफी मांगने को कह दिया। दरअसल टीएमसी नेता डेरेक ओ ब्रायन ने शाह पर पलटवार करते हुए कहा है कि अमित शाह बंगाल की संस्कृति नहीं जानते हैं, ऐसे में उन्होंने जो कुछ भी कहा है वो बंगालियों का अपमान है। इस पर राजनीतिज्ञ कह रहे हैं कि बदलाव की क्रांति वाकई बंगाल से ही शुरू होगी, लेकिन देखना होगा कि यह किसके लिए लाभकारी होगी ओर किसके लिए नुक्सानदेह। जहां तक माफी मांगने का सवाल है तो चुनावी जुमलों के लिए शाह क्योंकर माफी मांगेंगे, यह सोचने वाली बात है।

राहुल की फ्लाइट का लेट हो जाना

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी पिछले दिनों छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में प्रदेश कांग्रेस कार्यालय श्राजीव भवनश् का उद्घाटन करने के बाद फ्लाइट से दिल्ली के लिए रवाना होने के लिए चढ़े। खबरों के मुताबिक इंडिगो की इस फ्लाइट में राहुल के बैठते ही एसपीजी ने सुरक्षा जांच शुरू कर दी। जांच की वजह से फ्लाइट को उड़ान भरने में देरी हुई तो मोदी समर्थक हर हर मोदी के नारे लगाने लगे, लेकिन राहुल समर्थकों ने भी उसका जवाब दिया, लेकिन राहुल सिर्फ मुस्कुराते रहे और कुछ न बोले। ऐसे में एक महिला ने कहा कि आपकी वजह से फ्लाइट लेट हो रही है, इस पर जरा राहुल ने कहा कि इस बारे में वो कुछ नहीं कर सकते, क्योंकि उन्हें बदनाम करने के लिए यह सब मोदी जी की चाल है। अब इसके चर्चे पूरे छत्तीसगढ़ से लेकर दिल्ली तक हैं कि आखिर राहुल की फ्लाइट लेट क्यों करवाई गईए जबकि वो समय पर पहुंच गए थे।